

राजस्थान उच्च न्यायालय की जयपुर पीठ के लिए

एसबी सिविल रिट याचिका संख्या 7869/2023

राजस्थान प्राइवेट नर्सिंग स्कूल एवं कॉलेज फेडरेशन, अपने अधिकृत प्रतिनिधि श्री जय नारायण मीना ई 277, नई विधानसभा के पीछे, लाल कोठी योजना, जयपुर 302015 के माध्यम से.

-----याचिकाकर्ता

बनाम

राजस्थान राज्य प्रमुख सचिव, चिकित्सा एवं स्वास्थ्य विभाग, सचिवालय, जयपुर (राजस्थान) के माध्यम से।

-----प्रतिवादी

सम्बंधित

एसबी सिविल रिट याचिका संख्या 9762/2023

प्राइवेट फिजियोथेरेपी, नर्सिंग एवं पैरा मेडिकल इंस्टीट्यूशंस सोसायटी ऑफ जयपुर द्वारा अपने अधिकृत प्रतिनिधि/सचिव श्री दिलीप तिवारी, संगम होटल, 17, मोती लाल अटल रोड, जयपुर के माध्यम से।

-----याचिकाकर्ता

बनाम

राजस्थान राज्य प्रमुख सचिव, चिकित्सा एवं स्वास्थ्य विभाग, सचिवालय, जयपुर (राजस्थान) के माध्यम से।

-----प्रतिवादी

याचिकाकर्ता(ओं) के लिए : श्री अजातशत्रु मीना, श्री ईशान सांघी ,

इस मामले में डी.बी.एसएडब्ल्यू/230/2024 और एक अन्य मामला दायर किया गया है। कृपया
आगे के आदेशों के लिए इसे देखें।

(28/05/2025 को शाम 05:18:31 बजे डाउनलोड किया गया)

श्री सुवीर गौड़ और श्री जीपी शर्मा, अधिवक्ता।
प्रतिवादी(ओं) की ओर से : श्री भरत सैनी, अतिरिक्त सरकारी वकील।

माननीय श्रीमान. जस्टिस अनूप कुमार ढांड

आरक्षित तिथि : 17/01/2024

घोषित तिथि : 31/01/2024

आदेश

प्रकाशनीय

1. भारतीय संविधान के अनुच्छेद 226 के अंतर्गत दायर इन दोनों रिट याचिकाओं में विधि और तथ्यों का एक ही प्रश्न शामिल है, अतः दोनों पक्षों के अधिवक्ताओं की सहमति से, इन दोनों मामलों पर एक साथ सुनवाई की जाती है और इस सामान्य आदेश द्वारा इन दोनों मामलों का निर्णय किया जाता है। सुविधा के लिए, तथ्यों के साथ-साथ एसबी सिविल रिट याचिका संख्या 7869/2023 के अनुरोध पर भी विचार किया जाता है।

2. याचिकाकर्ता द्वारा निम्नलिखित प्रार्थना के साथ यह रिट याचिका दायर की गई है:

“1. प्रतिवादी द्वारा पारित दिनांक 15.02.2023 के आक्षेपित आदेश को रद्द करने और अपास्त करने के लिए (अनुलग्नक संख्या पी/1)।

2. प्रतिवादियों को याचिकाकर्ता महासंघ के सदस्य महाविद्यालयों में छात्रों के प्रवेश के लिए निर्धारित 50% कोटे में हस्तक्षेप करने से रोका जाए।”

प्रतिद्वंद्वी प्रस्तुतियाँ:

इस मामले में डी.बी.एस.एडब्ल्यू/230/2024 और एक अन्य मामला दायर किया गया है। कृपया
आगे के आदेशों के लिए इसे देखें।

(28/05/2025 को शाम 05:18:31 बजे डाउनलोड किया गया)

3. याचिकाकर्ताओं के विद्वान वकील ने प्रस्तुत किया कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा कई अवसरों पर जारी किए गए निर्देशों के अनुसार, राज्य द्वारा विभिन्न विषयों जैसे जनरल नर्सिंग एंड मिडवाइफरी (जीएनएम), नर्सिंग में विज्ञान स्नातक, नर्सिंग में विज्ञान स्नातक और नर्सिंग में विज्ञान स्नातकोत्तर की 50% सीटों पर प्रवेश देने के लिए कॉलेज फेडरेशन को अनुमति देने की प्रथा का पालन किया जा रहा है। वकील ने प्रस्तुत किया कि इस संबंध में प्रतिवादियों द्वारा वर्ष 2004 में अर्थात् 04.09.2004 को एक आदेश जारी किया गया था, जिसके द्वारा राज्य द्वारा 50% सीटें और फेडरेशन द्वारा 50% सीटें भरने की व्यवस्था की गई थी। वकील ने प्रस्तुत किया कि उपरोक्त प्रथा का राज्य द्वारा एक दशक से अधिक समय तक पालन किया गया और वर्ष 2022 में अचानक, राज्य द्वारा 06.12.2022 को एक आदेश पारित किया गया, जिसके द्वारा संघ का 50% कोटा घटाकर 25% कर दिया गया। वकील ने कहा कि राज्य-प्रतिवादियों की उपरोक्त कार्रवाई पर कॉलेज फेडरेशन द्वारा आपत्ति की गई थी।

4. एसबी सिविल रिट याचिका संख्या 19083/2022 [राजस्थान प्राइवेट नर्सिंग स्कूल और कॉलेज फेडरेशन बनाम राजस्थान राज्य और अन्य] दायर करके याचिकाकर्ता ने राज्य की कार्रवाई की आलोचना की और उक्त याचिका को इस न्यायालय द्वारा 02.02.2023 के आदेश के तहत रिट याचिकाओं के अन्य बैच के साथ अनुमति दी गई और 06.12.2022 के आदेश को रद्द कर दिया गया और अपास्त किया गया और प्रतिवादियों को कानून के अनुसार नए आदेश पारित करने की स्वतंत्रता दी गई।

5. वकील ने प्रस्तुत किया कि राजस्थान प्राइवेट नर्सिंग स्कूल और कॉलेज फेडरेशन (सुप्रा) के मामले में इस न्यायालय द्वारा पारित उपरोक्त आदेश की गलत

इस मामले में डी.बी.एसएडब्ल्यू/230/2024 और एक अन्य मामला दायर किया गया है। कृपया आगे के आदेशों के लिए इसे देखें।

(28/05/2025 को शाम 05:18:31 बजे डाउनलोड किया गया)

व्याख्या करते हुए, राज्य द्वारा 15.02.2023 को एक नया आदेश पारित किया गया है, जिसके द्वारा फेडरेशन के लिए आरक्षित 50% कोटा छीन लिया गया है और अब राज्य द्वारा प्रत्येक छात्र को केवल राज्य द्वारा प्रवेश देने का निर्णय लिया गया है।

6. वकील ने कहा कि राज्य की उपरोक्त कार्रवाई मनमानी और गैरकानूनी है और इसे प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के पूर्ण उल्लंघन में पारित किया गया है क्योंकि आक्षेपित आदेश पारित करने से पहले याचिकाकर्ता फेडरेशन को सुनवाई का कोई अवसर प्रदान नहीं किया गया था। वकील ने कहा कि याचिकाकर्ता फेडरेशन को उपरोक्त विषयों में छात्रों को प्रवेश देने के लिए 50% कोटा प्राप्त करने का निहित अधिकार है। अपने तर्कों के समर्थन में उन्होंने इस्लामिक एकेडमी ऑफ एजुकेशन एंड अदर बनाम कर्नाटक राज्य और अन्य (2003) 6 एससीसी 697 और पी.ए. इनामदार और अन्य बनाम महाराष्ट्र राज्य और अन्य (2005) 6 एससीसी 537 के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित निम्नलिखित निर्णयों पर भरोसा रखा है। वकील ने कहा कि पिछली प्रथा यह दर्शाती है कि राज्य छात्रों को प्रवेश देने के लिए राज्य द्वारा रखे गए 50% कोटे को भी भरने की स्थिति में नहीं था। अतः इन परिस्थितियों में इस न्यायालय का हस्तक्षेप आवश्यक है और दिनांक 15.02.2023 के आदेश को निरस्त किया जाए।

7. इसके विपरीत, राज्य प्रतिवादियों के विद्वान अधिवक्ता ने याचिकाकर्ता के अधिवक्ता द्वारा उठाए गए तर्कों का विरोध किया और कहा कि याचिकाकर्ता महासंघ को प्रतिवादियों की कार्रवाई पर आपत्ति करने का कोई अधिकार नहीं है। अधिवक्ता ने कहा कि याचिकाकर्ता महासंघ द्वारा अपनाई गई पिछली प्रथाओं से संकेत मिलता है कि वे अर्हक परीक्षा उत्तीर्ण करने वाले छात्रों के अंकपत्र अपने पास रख लेते थे और उन छात्रों को सरकारी कॉलेजों में प्रवेश नहीं लेने देते थे। अधिवक्ता ने कहा कि यही

इस मामले में डी.बी.एस.एडब्ल्यू/230/2024 और एक अन्य मामला दायर किया गया है। कृपया
आगे के आदेशों के लिए इसे देखें।

(28/05/2025 को शाम 05:18:31 बजे डाउनलोड किया गया)

एकमात्र कारण है कि छात्रों को सरकारी कॉलेजों में प्रवेश नहीं मिल रहा है और महासंघ के उपरोक्त कृत्य के कारण सरकारी कॉलेजों में अधिकांश सीटें रिक्त रह जाती हैं। अधिवक्ता ने कहा कि इस्लामिक एकेडमी ऑफ एजुकेशन (उपरोक्त) मामले में याचिकाकर्ता के अधिवक्ता द्वारा दिया गया निर्णय, वर्तमान मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में लागू नहीं होता है क्योंकि एक अंतरिम उपाय के रूप में, वर्ष 2003-2004 के एक विशेष सत्र के लिए, समय की कमी के कारण निजी कॉलेजों को 50:50 के अनुपात में प्रवेश की अनुमति दी गई थी। वकील ने दलील दी कि उपरोक्त निर्देश सर्वोच्च न्यायालय द्वारा इस्लामिक एकेडमी ऑफ एजुकेशन (उपरोक्त) के मामले में एक विशेष वर्ष के लिए जारी किया गया था, जो याचिकाकर्ता को हर साल 50% प्रवेश का अधिकार के रूप में दावा करने का कोई निहित अधिकार नहीं देता है। वकील ने दलील दी कि इन परिस्थितियों में, राज्य ने 15.02.2023 का आदेश पारित करके कोई त्रुटि नहीं की है। वकील ने दलील दी कि उपरोक्त प्रस्तुतियों के मद्देनजर, इस न्यायालय का हस्तक्षेप उचित नहीं है।

चर्चाएँ:

8. बार में प्रस्तुत किए गए तर्कों को सुना और उन पर विचार किया तथा रिकार्ड पर उपलब्ध सामग्री का अवलोकन किया।

9. याचिकाकर्ताओं के वकील का तर्क यह है कि वर्ष 2004 से प्रतिवादियों की पिछली प्रथा को देखते हुए, याचिकाकर्ता कॉलेज फेडरेशन को नर्सिंग पाठ्यक्रमों के विभिन्न विषयों में छात्रों को प्रवेश देने के लिए 50% कोटा प्राप्त करने का निहित अधिकार प्राप्त है। याचिकाकर्ताओं का उपरोक्त तर्क इस्लामिक एकेडमी ऑफ एजुकेशन (सुप्रा) के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा जारी अंतरिम आदेश पर

आधारित है, जिसके तहत निजी संस्थानों को छात्रों के लिए आरक्षित सीटों के 50% कोटे पर प्रवेश लेने की अनुमति दी गई थी। वकील का कहना है कि उपरोक्त अंतरिम निर्देश के आधार पर, प्रतिवादियों द्वारा कॉलेज फेडरेशन को अपने स्तर पर छात्रों को प्रवेश देने के लिए 50% कोटा देने की एक नियमित प्रथा का पालन किया गया है। वकील का कहना है कि उपरोक्त पिछली प्रथा के आधार पर, याचिकाकर्ता को उपरोक्त उद्देश्य के लिए 50% कोटा प्राप्त करने का निहित अधिकार प्राप्त है क्योंकि राज्य सरकार सरकारी कॉलेजों के लिए आरक्षित 50% कोटा भी भरने की स्थिति में नहीं है।

10. याचिकाकर्ताओं के वकील का अगला तर्क यह है कि 50% कोटे के लिए प्रवेश देने की इस पिछली प्रथा को राज्य द्वारा दिनांक 06.12.2022 के आदेश के तहत अचानक 25% तक घटा दिया गया और इस आदेश को याचिकाकर्ताओं ने एसबीसिविल रिट याचिका संख्या 19083/2022 दायर करके इस न्यायालय के समक्ष चुनौती दी और इसे दिनांक 02.02.2023 के आदेश के तहत अनुमति दी गई और दिनांक 06.12.2022 के आदेश को रद्द कर दिया गया और प्रतिवादियों को कानून के अनुसार नया आदेश पारित करने की स्वतंत्रता प्रदान की गई।

11. उपरोक्त आदेश पारित होने के बाद, प्रतिवादियों ने 15.02.2023 को एक नया आदेश पारित किया और इस बार सरकार ने नर्सिंग स्कूलों और कॉलेजों की सभी 100% सीटें अपने स्तर पर भरने का निर्णय लिया है।

12. सूची-I की प्रविष्टि 66 और सूची-III (समवर्ती सूची) की प्रविष्टि 25 "शिक्षा" विषय से संबंधित हैं और यह शिक्षा के मानकों से संबंधित है। संघ और राज्य दोनों को शिक्षा पर कानून बनाने की शक्तियाँ प्राप्त हैं और सूची-I की प्रविष्टि 66 तकनीकी

संस्थानों सहित शिक्षा संस्थानों में मानक निर्धारित करने के साथ-साथ ऐसे मानकों के निर्देशांकों से भी संबंधित है। राज्य को प्रदत्त शक्तियों के अनुरूप, वह शिक्षा के विभिन्न क्षेत्रों में छात्रों के प्रवेश की प्रक्रिया के बारे में नीतिगत निर्णय लेने के लिए सक्षम है।

13. कानून में यह सर्वमान्य है कि किसी विशेषाधिकार को शामिल या बहिष्कृत करने का निर्णय विधानमंडल को लेना है, न कि न्यायालय को। न्यायालय को राज्य की नीति में संशोधन, परिवर्तन या कुछ जोड़ने का कोई अधिकार नहीं दिया गया है, जैसा कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 162 के तहत प्रदत्त शक्तियों के प्रयोग में राज्य के कामकाज के लिए होगा।

14. यदि सरकार अपने विवेक से कुछ रियायतें देने या पिछले वर्षों में दी गई रियायतों को वापस लेने का निर्णय लेती है, तो इसे अधिकार के रूप में पालन किए जाने की उम्मीद नहीं की जा सकती, जब तक कि उक्त प्रक्रिया में मनमानी न हो और माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने के.वी. राजलक्ष्मिया सेट्टी बनाम मैसूर राज्य एआईआर 1967 एससी 993 में दर्ज मामले में अनुच्छेद 12 में निम्नानुसार निर्णय दिया गया है:

“12. मैसूर राज्य की ओर से प्रस्तुत कुछ तर्कों में कुछ दम है। इनका परीक्षण करना आवश्यक नहीं है क्योंकि हम अपीलकर्ताओं के तर्कों का समर्थन करने में असमर्थ हैं। निस्संदेह, 41 व्यक्तियों के पहले समूह को कुछ रियायतें दी गई थीं और 63 व्यक्तियों के समूह के बाद आने वाले व्यक्तियों के समूहों को भी कुछ रियायतें मिली थीं, लेकिन आखिरकार ये रियायतें थीं और ऐसी कोई चीज नहीं थी जिसका वे अधिकार के रूप में दावा कर सकें। मैसूर राज्य 63 व्यक्तियों के इस

इस मामले में डी.बी.एसएडब्ल्यू/230/2024 और एक अन्य मामला दायर किया गया है। कृपया आगे के आदेशों के लिए इसे देखें।

(28/05/2025 को शाम 05:18:31 बजे डाउनलोड किया गया)

समूह को कुछ रियायत दे सकता था, लेकिन हम उसे ऐसा करने का आदेश देते हुए परमादेश रिट जारी नहीं कर सकते। ऐसा कोई सेवा नियम नहीं था जिसका राज्य ने उल्लंघन किया हो और न ही राज्य ने सर्वेक्षक से सहायक अभियंता के पद पर पदोन्नत व्यक्तियों के संबंध में पालन करने योग्य कोई सिद्धांत विकसित किया है। व्यक्तियों के विभिन्न समूहों को दी गई रियायतें वास्तव में तदर्थ थीं और हम यह कहने की स्थिति में नहीं हैं कि हमारे समक्ष उपस्थित अपीलकर्ताओं को क्या, यदि कोई हो, तदर्थ रियायत दी जानी चाहिए।”

15. इस मामले में उठाया गया एक अन्य मुद्दा वैध अपेक्षा के बारे में है। वैध का सिद्धांत अपने आप में किसी व्यक्ति को कोई अधिकार प्रदान नहीं करता है। वास्तव में, इस अवधारणा को एक ऐसी परिस्थिति के रूप में समझाया गया है जहां किसी सार्वजनिक प्राधिकरण या किसी व्यक्ति के आचरण से, किसी अन्य व्यक्ति को यह विश्वास दिलाया जाता है कि एक विशेष स्थिति अस्तित्व में होगी और उसके बाद, जब ऐसी स्थिति को उसके नुकसान के लिए बदल दिया जाता है, तो वैध अपेक्षा की शिकायत हो सकती है। जैसा कि ऊपर कहा गया है, वैध अपेक्षा का सिद्धांत किसी को भी कोई राहत देने का आधार नहीं है। जो व्यक्ति वैध अपेक्षा के सिद्धांत पर भरोसा करता है, उसे यह साबित करना होगा कि उसने प्रतिनिधित्व पर काम किया है और अपेक्षा से इनकार करने से उसे नुकसान हुआ है। वैध अपेक्षा की अवधारणा को माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा सेठी ऑटो सर्विस स्टेशन एवं अन्य बनाम दिल्ली विकास प्राधिकरण एवं अन्य (2009) 1 एससीसी 180 में निम्नलिखित शब्दों में विस्तार से समझाया गया है:

“24. वैध अपेक्षाओं की सुरक्षा, जैसा कि डी स्मिथ की न्यायिक समीक्षा (6 वां संस्करण), (पैरा 12-001) में बताया गया है,

इस मामले में डी.बी.एस.एडब्ल्यू/230/2024 और एक अन्य मामला दायर किया गया है। कृपया आगे के आदेशों के लिए इसे देखें।

(28/05/2025 को शाम 05:18:31 बजे डाउनलोड किया गया)

कानून के शासन के संवैधानिक सिद्धांत के मूल में है, जिसके लिए सरकार के जनता के साथ व्यवहार में नियमितता, पूर्वानुमेयता और निश्चितता की आवश्यकता होती है। वैध अपेक्षा के सिद्धांत और प्रशासनिक कानून में इसके प्रभाव पर इस न्यायालय द्वारा कई निर्णयों में विचार किया गया है, लेकिन संक्षिप्तता के लिए हम इन सभी मामलों का उल्लेख करने का प्रस्ताव नहीं रखते हैं। फिर भी, अवधारणा की सराहना करने के लिए, हम कुछ निर्णयों का उल्लेख करेंगे।

25. इस मोड़ पर, हम हाउस ऑफ लॉर्ड्स द्वारा काउंसिल ऑफ सिविल सर्विस यूनियंस बनाम मिनिस्टर फॉर सिविल सर्विस मामले में दिए गए निर्णय का उल्लेख करना आवश्यक समझते हैं, जो इस विषय पर एक उत्कृष्ट विषय है, जिसमें पहली बार वैध अपेक्षा के सिद्धांत को एक व्यापक परिभाषा देने का प्रयास किया गया था। वैध अपेक्षा से संबंधित मूल सिद्धांतों का प्रतिपादन करते हुए, लॉर्ड डिप्लॉक ने कहा कि वैध अपेक्षा उत्पन्न होने के लिए, प्रशासनिक प्राधिकारी का निर्णय ऐसे व्यक्ति को या तो (क) उस व्यक्ति के अधिकारों या दायित्वों को बदलकर प्रभावित करेगा जो निजी कानून में उसके द्वारा या उसके विरुद्ध प्रवर्तनीय हैं, या (ख) उसे किसी ऐसे लाभ या फायदे से वंचित करके जो या तो: (i) उसे अतीत में निर्णयकर्ता द्वारा प्राप्त करने की अनुमति दी गई है और जिसका वह वैध रूप से तब तक आनंद लेने की अनुमति की अपेक्षा कर सकता है जब तक कि उसे इसे वापस लेने का कोई तर्कसंगत आधार नहीं बताया जाता है और उसे उस पर टिप्पणी करने का अवसर नहीं दिया जाता है, या (ii) उसे निर्णयकर्ता से यह आश्वासन प्राप्त हो गया है कि उन्हें वापस लेने के कारणों को प्रस्तुत करने का अवसर दिए बिना उन्हें वापस नहीं लिया जाएगा।

26. इस विषय पर एक प्रमुख मामले, अटॉर्नी जनरल ऑफ़ हांगकांग बनाम एनजी यूएन शिउ में, लॉर्ड फ्रेज़र ने कहा:

“जब कोई सार्वजनिक प्राधिकरण किसी निश्चित प्रक्रिया का पालन करने का वादा करता है, तो अच्छे प्रशासन के हित में यह आवश्यक है कि वह निष्पक्ष रूप से कार्य करे और अपने वादे को लागू करे, बशर्ते कि कार्यान्वयन उसके वैधानिक कर्तव्य में हस्तक्षेप न करे।”

27. वैध अपेक्षा के सिद्धांत की प्रकृति और दायरे को स्पष्ट करते हुए, भारतीय खाद्य निगम बनाम कामधेनु कैटल फीड इंडस्ट्रीज (1993) 1 एससीसी 71 में रिपोर्ट की गई, इस न्यायालय की तीन न्यायाधीशों की पीठ ने इस प्रकार टिप्पणी की थी:

“8. ऐसी स्थिति में, किसी नागरिक की मात्र उचित या वैध अपेक्षा, अपने आप में एक पृथक प्रवर्तनीय अधिकार नहीं हो सकती है, लेकिन उस पर विचार न करने और उसे उचित महत्व न देने से निर्णय मनमाना हो सकता है, और इस प्रकार एक वैध अपेक्षा पर उचित विचार की आवश्यकता, गैर-मनमानापन के सिद्धांत का एक भाग बनती है, जो विधि के शासन का एक आवश्यक सहवर्ती है। प्रत्येक वैध अपेक्षा एक प्रासंगिक कारक है जिस पर निष्पक्ष निर्णय प्रक्रिया में उचित विचार की आवश्यकता होती है। दावेदार की अपेक्षा, संदर्भ में उचित या वैध है या नहीं, यह प्रत्येक मामले में तथ्य का प्रश्न है। जब भी यह प्रश्न उठता है, तो इसका निर्धारण दावेदार की धारणा के अनुसार नहीं, बल्कि व्यापक जनहित में किया जाना चाहिए, जहाँ अन्य अधिक महत्वपूर्ण विचार, दावेदार की वैध अपेक्षा से अधिक महत्वपूर्ण हो सकते हैं। इस प्रकार लिया गया लोक प्राधिकारी का एक सद्भावपूर्ण निर्णय गैर-मनमानापन की आवश्यकता को पूरा करेगा और न्यायिक जाँच का

इस मामले में डी.बी.एस.एडब्ल्यू/230/2024 और एक अन्य मामला दायर किया गया है। कृपया आगे के आदेशों के लिए इसे देखें।

(28/05/2025 को शाम 05:18:31 बजे डाउनलोड किया गया)

सामना कर सकेगा। वैध अपेक्षा का सिद्धांत विधि के शासन में समाहित हो जाता है और हमारी विधिक प्रणाली में इसी प्रकार और इसी सीमा तक कार्य करता है।”

28. वैध अपेक्षा की अवधारणा पर फिर से भारत संघ बनाम हिंदुस्तान डेवलपमेंट कॉर्पोरेशन मामले में विचार किया गया , जिसकी रिपोर्ट (1993) 3 एससीसी 499 में दी गई। बड़ी संख्या में विदेशी और भारतीय निर्णयों का हवाला देते हुए, जिनमें काउंसिल ऑफ सिविल सर्विस यूनियन बनाम मिनिस्टर फॉर सिविल सर्विस मामले (1984) 2 डब्ल्यूएलआर 1174 में रिपोर्ट और एफसीआई बनाम कामधेनु कैटल फीड इंडस्ट्रीज मामले (1993) 1 एससीसी 71 में रिपोर्ट शामिल हैं, और वैध अपेक्षा की अवधारणा को विस्तार से समझाते हुए, यह निम्नानुसार देखा गया: (हिंदुस्तान डेवलपमेंट कॉर्पोरेशन मामला, एससीसी पृ. 549, पैरा 35)

"35. यदि किसी मामले में वैध अपेक्षा का खंडन गारंटीकृत अधिकार के खंडन के बराबर है या मनमाना, भेदभावपूर्ण, अनुचित या सत्ता के घोर दुरुपयोग या प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के उल्लंघन पर आधारित है, तो अनुच्छेद 14 के अंतर्गत आने वाले सुविदित आधारों पर उस पर प्रश्न उठाया जा सकता है, लेकिन बिना किसी अतिरिक्त आधार के केवल वैध अपेक्षा पर आधारित दावा स्वतः ही इन सिद्धांतों को लागू करने का अधिकार नहीं दे सकता। यह विचारणीय आधारों में से एक हो सकता है, लेकिन न्यायालय को पर्दा उठाकर देखना चाहिए कि क्या निर्णय इन सिद्धांतों का उल्लंघन करता है जिसके लिए हस्तक्षेप आवश्यक है। यह बहुत हद तक तथ्यों और ऐसे तथ्यों पर लागू प्रशासनिक कानून के मान्यता प्राप्त सामान्य सिद्धांतों पर निर्भर करता है

और वैध अपेक्षा की अवधारणा, जो प्रशासनिक कार्रवाई की समीक्षा के लिए न्यायालयों द्वारा तैयार की गई अवधारणाओं की लंबी सूची में नवीनतम है, को किसी विशेष मामले में प्रशासनिक शक्ति के भविष्य के प्रयोग के तरीके पर लागू और बाध्यकारी सामान्य कानूनी सीमाओं तक सीमित रखा जाना चाहिए। इसका अर्थ यह है कि वैध अपेक्षा की अवधारणा "वह कुंजी नहीं है जो प्राकृतिक न्याय के खजाने को खोलती है और इसे उन द्वारों को नहीं खोलना चाहिए जो न्यायालय को बंद कर देते हैं।" "गुण-दोष के आधार पर समीक्षा करना" विशेष रूप से तब जब अटकलों और अनिश्चितता का तत्व उसी अवधारणा में अंतर्निहित हो।"

न्यू साउथ वेल्स के अटॉर्नी जनरल बनाम क्विन मामले (1990) 64 ऑस्ट एलजेआर 327 में ऑस्ट्रेलियाई उच्च न्यायालय की इस टिप्पणी को ध्यान में रखते हुए कि "किसी व्यक्ति की वैध अपेक्षाओं की निराशा से बचने के आधार पर प्रशासनिक शक्ति के प्रयोग को रद्द करना, अदालतों को व्यावहारिकता के एक बेढंगे समुद्र में भटकाने के समान होगा", पीठ की ओर से बोलते हुए, न्यायमूर्ति के. जयचंद्र रेड्डी ने कहा कि वैध अपेक्षाओं को मौलिक रूप से संरक्षित क्यों नहीं किया जाना चाहिए, इसके लिए उन कारणों से कहीं अधिक मजबूत कारण हैं, जिनके लिए इसे संरक्षित किया जाना चाहिए। उक्त ऑस्ट्रेलियाई मामले में दी गई चेतावनी कि अदालतों को खुद को संयमित रखना चाहिए और ऐसे दावों को कानूनी सीमाओं तक ही सीमित रखना चाहिए, का भी समर्थन किया गया।

29. इसके बाद नेशनल बिल्डिंग कंस्ट्रक्शन कॉर्पोरेशन बनाम एस. रघुनाथन एवं अन्य (1998) 7 एससीसी 66 में इस न्यायालय की तीन न्यायाधीशों की पीठ ने निम्नलिखित टिप्पणी की: (एससीसी पृष्ठ 75, पैरा 18)

इस मामले में डी.बी.एसएडब्ल्यू/230/2024 और एक अन्य मामला दायर किया गया है। कृपया आगे के आदेशों के लिए इसे देखें।

(28/05/2025 को शाम 05:18:31 बजे डाउनलोड किया गया)

“18. "वैध अपेक्षा" के सिद्धांत की उत्पत्ति प्रशासनिक विधि के क्षेत्र में हुई है। देश के प्रशासन में सरकार और उसके विभागों से अपेक्षा की जाती है कि वे अपनी नीति या आशय के कथनों का सम्मान करें और नागरिकों के साथ बिना किसी विवेकाधिकार के रती भर भी व्यक्तिगत सम्मान के साथ व्यवहार करें। नीति कथनों की अनुचित रूप से अवहेलना नहीं की जा सकती या उन्हें चुनिंदा रूप से लागू नहीं किया जा सकता। अनुचितता के रूप में अन्याय प्राकृतिक न्याय का उल्लंघन है। इसी संदर्भ में "वैध अपेक्षा" के सिद्धांत का विकास हुआ, जो आज मूल और प्रक्रियात्मक अधिकारों का स्रोत बन गया है। लेकिन "वैध अपेक्षा" पर आधारित दावों के लिए अभ्यावेदन पर निर्भरता आवश्यक मानी गई है और इसके परिणामस्वरूप दावेदार को उसी तरह नुकसान होता है जैसे वचनबद्ध विबंधन पर आधारित दावों से होता है।”

30. xx xx xx

31. हाल ही में जितेंद्र कुमार बनाम हरियाणा राज्य (2008) 2 एससीसी 161 में दर्ज मामले में यह दोहराया गया है कि वैध अपेक्षा और प्रत्याशा एक ही चीज़ नहीं हैं। यह इच्छा और आशा से अलग और भिन्न है। यह अधिकार पर आधारित है। यह कानून के शासन पर आधारित है क्योंकि सरकार के जनता के साथ व्यवहार में नियमितता, पूर्वानुमेयता और निश्चितता की आवश्यकता होती है और वैध अपेक्षा का सिद्धांत प्रक्रियात्मक और मूल दोनों मामलों में लागू होता है।

32. उपर्युक्त कुछ निर्णयों की जाँच से पता चलता है कि इन सभी निर्णयों में एक महत्वपूर्ण बिंदु यह है कि वैध अपेक्षा के सिद्धांत की प्रयोज्यता का मामला, जिसे अब हमारे विधिक न्यायशास्त्र के एक भाग के रूप में व्यक्तिपरक अर्थ में स्वीकार

किया जाता है, तब उत्पन्न होता है जब कोई प्रशासनिक निकाय किसी अभ्यावेदन या पूर्व व्यवहार या आचरण के कारण कोई ऐसी अपेक्षा जगाता है जिसे पूरा करना उसके अधिकार क्षेत्र में होगा, जब तक कि कोई सर्वोपरि जनहित आड़े न आए। हालाँकि, कोई व्यक्ति जो अपना दावा वैध अपेक्षा के सिद्धांत पर आधारित करता है, उसे प्रथम दृष्टया यह संतुष्ट होना होगा कि उसने उक्त अभ्यावेदन पर भरोसा किया है और उस अपेक्षा का खंडन उसके लिए हानिकारक रहा है। न्यायालय केवल तभी हस्तक्षेप कर सकता है जब प्राधिकारी द्वारा लिया गया निर्णय मनमाना, अनुचित या शक्ति के घोर दुरुपयोग या प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन करने वाला पाया जाए और जनहित में न लिया गया हो। लेकिन बिना किसी अतिरिक्त आधार के केवल वैध अपेक्षा पर आधारित दावा स्वतः ही इन सिद्धांतों को लागू करने का अधिकार नहीं दे सकता।

33. यह सर्वविदित है कि वैध अपेक्षा की अवधारणा तब तक कोई भूमिका नहीं निभाती जब तक कि राज्य की कार्यवाही लोक नीति या लोकहित में न हो, जब तक कि की गई कार्यवाही सत्ता के दुरुपयोग के बराबर न हो। न्यायालय को उस लोक प्राधिकारी के विवेकाधिकार का अतिक्रमण नहीं करना चाहिए जो कानून के तहत निर्णय लेने के लिए अधिकृत है और न्यायालय से एक वस्तुनिष्ठ मानदंड लागू करने की अपेक्षा की जाती है जो निर्णय लेने वाले प्राधिकारी को उन सभी विकल्पों की पूरी श्रृंखला प्रदान करता है जिनके बारे में माना जाता है कि विधायिका ने ऐसा करने का इरादा किया था। यहाँ तक कि ऐसे मामले में भी जहाँ निर्णय पूरी तरह से निर्णय लेने वाले प्राधिकारी के विवेक पर छोड़ दिया जाता है, बिना किसी कानूनी सीमा के और यदि निर्णय निष्पक्ष और वस्तुनिष्ठ रूप से लिया जाता है, तो न्यायालय प्रक्रियात्मक निष्पक्षता के आधार पर उस व्यक्ति के

मामले में हस्तक्षेप नहीं करेगा जिसका वैध अपेक्षा पर आधारित हित प्रभावित हो सकता है। इसलिए, एक वैध अपेक्षा अधिक से अधिक उन आधारों में से एक हो सकती है जो न्यायिक समीक्षा को जन्म दे सकती है, लेकिन राहत प्रदान करना बहुत सीमित है।

16. जब कोई व्यक्ति अपना दावा वैध अपेक्षा के सिद्धांत पर आधारित करता है, तो उसे यह सुनिश्चित करना होगा कि उसने प्राधिकारी के उक्त प्रतिनिधित्व पर भरोसा किया है और उस अपेक्षा का खंडन उसके लिए हानिकारक रहा है। न्यायालय केवल तभी हस्तक्षेप कर सकता है जब प्राधिकारी द्वारा लिया गया निर्णय मनमाना, अनुचित या शक्ति का घोर दुरुपयोग या प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन करने वाला पाया जाए और जनहित में न लिया गया हो। बिना किसी अतिरिक्त आधार के केवल वैध अपेक्षा पर आधारित दावा स्वतः ही इन सिद्धांतों का आह्वान करने का अधिकार नहीं दे सकता।

17. भारत संघ एवं अन्य बनाम लेफ्टिनेंट कर्नल पी.के.चौधरी एवं अन्य के मामले में (2016) 4 एससीसी 236 में रिपोर्ट किया गया, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने माना है कि एक तर्क के रूप में वैध अपेक्षा सरकार द्वारा शुरू की गई किसी नीति पर हावी नहीं हो सकती है जो किसी भी विकृति, अनुचितता या अनुचितता से ग्रस्त नहीं है या जो प्रतिवादियों में निहित किसी भी मौलिक या अन्य लागू करने योग्य अधिकारों का उल्लंघन नहीं करती है।

18. यह न्यायालय याचिकाकर्ताओं की ओर से प्रस्तुत किए गए तर्कों को स्वीकार करने में असमर्थ है, जिसमें पिछले वर्षों की तरह मामले को बनाने के लिए वैध अपेक्षा के सिद्धांत का आह्वान किया गया है, कॉलेज फेडरेशन ने वैध रूप से उम्मीद

की थी कि इस वर्ष भी उन्हें विभिन्न नर्सिंग पाठ्यक्रमों में प्रवेश पाने के लिए 50% से अधिक छात्रों का कोटा मिलेगा, क्योंकि राज्य सरकारी नर्सिंग स्कूलों और कॉलेजों में सीटें भरने में सक्षम नहीं था।

19. वैध अपेक्षा कोई कानूनी अधिकार नहीं है; बल्कि यह लाभ, राहत/उपचार की अपेक्षा है जो राज्य या किसी पक्ष द्वारा अपनाए गए वादे या स्थापित प्रथा से प्राप्त होती है।

20. इस मामले में, राज्य द्वारा मौजूदा नीति को जारी रखने के लिए किसी भी प्रकार का कोई प्रावधान नहीं किया गया था। यह सर्वविदित है कि राज्य के किसी भी नीतिगत निर्णय पर तब तक कोई रोक नहीं लगाई जा सकती जब तक यह न पाया जाए कि याचिकाकर्ताओं के किसी मौलिक अधिकार या अन्य प्रवर्तनीय अधिकारों का उल्लंघन हुआ है। याचिकाकर्ता, केवल इस्लामिक एकेडमी ऑफ एजुकेशन (सुप्रा) मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित किसी अंतरिम आदेश के आधार पर, याचिकाकर्ता संघ को 50% कोटा प्रदान करने की पूर्व प्रचलित प्रथा पर रोक या वैध अपेक्षा के नियम का दावा नहीं कर सकता।

21. इस्लामिक एकेडमी ऑफ एजुकेशन (सुप्रा) के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित अंतरिम आदेश पर आते हुए, जिसके तहत संस्थानों को 10+2 परिणामों के आधार पर और राज्य के लिए 50% कोटा और निजी कॉलेजों के लिए 50% कोटा के आधार पर प्रवेश लेने की अनुमति दी गई थी, इस न्यायालय की यह सुविचारित राय है कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने नर्सिंग स्कूलों और कॉलेजों में प्रवेश के लिए अपनाई गई प्रक्रिया के प्रश्न पर एक मिसाल के रूप में पालन किए जाने वाले कानून को कहीं भी निर्धारित नहीं किया है।

निष्कर्ष:

22. अतः, यह स्पष्ट है कि न तो माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने राज्य को निजी स्कूल/कॉलेज संघ को प्रत्येक वर्ष प्रवेश हेतु 50% कोटा प्रदान करने की अनुमति दी है और न ही ऐसे संघ को छात्रों के प्रवेश हेतु प्रत्येक वर्ष 50% कोटा प्राप्त करने का कोई निहित अधिकार है। अतः, ऐसी परिस्थितियों में, प्रतिवादी/राज्य की कार्रवाई मनमानी नहीं मानी जा सकती क्योंकि यह सरकारी स्कूलों और कॉलेजों में छात्रों को अधिकतम प्रवेश प्रदान करने के लिए की गई है। दिनांक 15.02.2023 का आक्षेपित आदेश किसी भी प्रकार की विकृति, अनुचितता या अनुचितता से ग्रस्त नहीं है और यह याचिकाकर्ता संघ के किसी भी मौलिक या अन्य लागू करने योग्य निहित अधिकारों का उल्लंघन नहीं करता है।

23. परिणामस्वरूप, दिनांक 15.02.2023 का आक्षेपित आदेश न्यायसंगत एवं उचित है, जिसमें इस न्यायालय के हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है। रिट याचिकाएँ निराधार पाई गई हैं और इन्हें एतद्वारा खारिज किया जाता है।

24. स्थगन आवेदन और सभी लंबित आवेदन, यदि कोई हों, का निपटारा किया जाता है।

25. पक्षकारों को अपना खर्च स्वयं वहन करने की स्वतंत्रता होगी।

निर्देश:

26. हालाँकि, आदेश जारी करने से पहले, यह न्यायालय प्रतिवादी-राज्य को यह निर्देश देना उचित और उचित समझता है कि वह सरकारी स्कूलों/कॉलेजों में सभी विषयों की अधिकतम सीटों को शत-प्रतिशत भरने के लिए एक तंत्र और नीति बनाए और यदि सीटें खाली भी रहती हैं, तो अध्ययन और पाठ्यक्रम शुरू होने से पहले

इस मामले में डी.बी.एस.एडब्ल्यू/230/2024 और एक अन्य मामला दायर किया गया है। कृपया
आगे के आदेशों के लिए इसे देखें।

(28/05/2025 को शाम 05:18:31 बजे डाउनलोड किया गया)

छात्रों को प्रवेश देने के लिए याचिकाकर्ता-महासंघ को शेष सीटें उपलब्ध कराने के लिए एक तंत्र और नीति बनाए। प्रतिवादियों से अपेक्षा की जाती है कि वे इस संबंध में यथाशीघ्र पर्याप्त और उचित दिशानिर्देश जारी करें।

(अनूप कुमार ढांड) ,जे

सोलंकी डी.एस., पी.एस.

अस्वीकरण: इस निर्णय का अनुवाद स्थानीय भाषा में किया जा रहा है, एवं इसका प्रयोग केवल पक्षकार इसको समझने के लिए उनकी भाषा में कर सकेंगे एवं यह किसी अन्य प्रयोजन में काम नहीं ली जायेगी। सभी आधिकारिक एवं व्यावहारिक उद्देश्यों के लिए उक्त निर्णय का अंग्रेज़ी संस्करण ही विश्वसनीय माना जायेगा एवं निष्पादन एवं क्रियान्वयन में भी उसी को उपयोग में लिया जायेगा।



अधिवक्ता अविनाश चौधरी